प्र थ म अ ध्या य

मोहन राकेश : जीवन परिचय, व्यक्तित्व तथा कृतित्व

मोहन राकेश : जीवन परिचय, व्यक्तित्व तथा कृतित्व --

प्रस्तावना -

आधुनिक काल में हिन्दी साहित्य को नयी दिशा देने का प्रयत्न जिन साहित्यकारों ने किया है, उनमें मोहन राकेश का नाम प्रमुख है । सिर्फ काव्य छोडकर साहित्य के बाकी सभी क्षेत्रों में -- कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी और प्रवास वर्णन -- उन्होंने अपना नाम अक्षुण्ण रखा है । वैसे तो मोहन राकेश ने साहित्य प्रचुर मात्रा में नहीं लिखा है, लेकिन अपनी छोटी सी जीवनावधि में उन्होंने जो साहित्य हिन्दी को दिया है, उसीसे उनका श्रेष्ठत्व दिखाई देता है । उनके साहित्य में अधिकतर आधुनिक संवेदना का स्वर मुखरित होता है । उन्होंने अपने जीवन में जो भी कुछ देखा और भोगा, उसी को हमारे सामने रखा है । उनके साहित्य में आत्मानुभूति दिखाई देती है । साहित्य के विविध क्षेत्रों में उन्होंने नये नये प्रयोग किये हैं । उनके व्यक्तित्व के समान उनकी कृतियाँ भी बडी निराली है । एक तरफ हिन्दी साहित्य को उन्होंने नयी दिशा दी, तो दूसरी तरफ हिन्दी नाट्य साहित्य समृध्द बनाया । उनके नाटक प्रयोगशीलता की दृष्टि से पूर्णत: यशस्वी हुए हैं ।

पाठकों का राकेश की ओर देखने का दृष्टिकोण अलग अलग था। कोई उन्हें 'भटकनेवाला कलाकार'[1] कहते, तो कोई 'डाक बंगले का मेहमान'[2] समझते। कोई कहते 'वह एक उत्कृष्ट लेखक है, लेकिन उतना ही बुरा मनुष्य है।'[3] कोई कहते 'बडा घमंडी आदमी'[4] है। कुछ लोगों को वह भावनाप्रधान आदमी लगता था। लोग कहते - राकेश का व्यक्तित्व प्रत्येक कोण से अलग अलग लगता है। कुछ लोग उनके बारे में मार्मिक अभिप्राय भी व्यक्त करते थे। वे कहते --'वह कर्ज लेकर जिंदगी गुजारता है और वस्त्रों की तरह बीवियाँ बदलता है।'[5] कुछ लोगों की दृष्टि से 'वह इतने ऊँचे ठहाके लगाता है, कि बिजली की तारोंपर बैठी चिडियाँ उड जाती हैं, राह चलते लोग ठिठक जाते हैं।'[6]

उनके बारे में ये विभिन्न मत जानकर हमारे मन में अनायास ही उत्सुकता जाग्रत होती है, कि सचमुच यह व्यक्ति कैसा था। और जब हम उनके जीवन में झाँकने का प्रयत्न करते हैं, तब हमें दिखाई देता है, कि राकेश का बचपन, शिक्षा, शादियाँ, नौकरियाँ तथा साहित्य आदि सभी क्षेत्रों में आंतर तथा बाह्य संघर्ष के ज्वार-भाटों ने ऊधम मचा दिया है। यह एक सर्वमान्य और मनोवैज्ञानिक तथ्य है, कि पारिवारिक और घरेलू वातावरण तथा समसामयिक परिस्थितियाँ ही व्यक्ति के व्यक्तित्व को गढाने में सहायता करती हैं और राकेश के व्यक्तित्व निर्माण में यह मनोवैज्ञानिक तथ्य नितांत खरा उतरता है।

---

१ पुष्पा बंसल - मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - पृ.१ व २

२ -वही- पृ.१ व २

३ -वही- पृ.१ व २

४ -वही- पृ.१ व २

५ - वही- पृ.१ व २

६ पुष्पा बंसल - मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - पृ.१ व २।

जीवन परिचय --

मोहन राकेश का जन्म ८ फरवरी १९२५ को अमृतसर में हुआ । उनका मूल नाम मदनमोहन गोगलानी था । उनके पिता करमचंद गोगलानी अच्छे खासे वकील थे । वे अमृतसर के प्रतिष्ठित नागरिक, जागरूक कार्यकर्ता तथा साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के पदाधिकारी थे । साहित्य और संगीत में उन्हें दिलचस्पी थी । मदनमोहन को उन्हीं से यह रुचि और संस्कार मिले । पिता की बैठक में मित्रों के बीच चलती वाल्मीकि से लेकर मैथिलीशरण गुप्त तक की आलोचना को मदन ध्यान से सुनता और कभी कभी संस्कृत में गद्यपद्य रचना का अभ्यास भी किया करता ।

जन्म के समय राकेश को परिवार में जो परिवेश प्राप्त हुआ, वह प्रभावपूर्ण और संतोषप्रद नहीं था । जिस घर में राकेश का प्रारंभिक जीवन व्यतीत हुआ, वह सीलन से भरा हुआ तथा बदबूदार नालियों से घिरा रहता था । घर में अक्सर स्त्रियों का झगडा होता रहता । घर के वातावरण में राकेश का मन घुटता था, लेकिन घर से बाहर जाने की उन्हें मनाही थी । उनके घर के पीछे कंजरों की बस्ती थी । वे कंजरों को, उनके बच्चों को नजदीक से देखना चाहते थे, लेकिन उनकी माँ तथा दादी माँ ने उन्हें इधर उधर जाना और देखना तो दूर, झाँकने को भी मना किया था । इसप्रकार मन के भीतर जग रही कामना और पारिवारिक जीवन से मिला कडा आदेश - इन दोनों को साथ साथ निभाना राकेश के लिए संभव नहीं था । राकेश के मन में यहीं से एक विद्रोही भावना जगने लगी थी । उन्होंने अपने पारिवारिक परिवेश के संबंध में लिखा है -- `हमारे घर के पीछे कंजरों के घर थे, और मैं उन्हीं की तरह नाचना चाहता था, किन्तु दादी-माँ मुझे उधर झाँकने तक नहीं देती थीं -- कहती हैं -- वह घर कंजारों का है । मुझे कंजर अच्छे लगते हैं । मैं खुद उनकी तरह नाचना चाहता हूँ । मगर दादी माँ घूरकर देखती हैं, तो कंजर बनने और नाचने का सारा उत्साह गायब हो जाता है ।` मैं दादी माँ के घुटनों में दुबक जाता हूँ ।[1]` इतना ही नहीं,

---

१ मोहन राकेश - आईने के सामने - पृ.१८६ ।

बचपन में वे बाहर न जाएँ, इसलिए उन्हें भूत, प्रेत, डायन आदि का भी भय दिखाया जाता था । और इसीलिए राकेश की दादी माँ उनके लिए शरणास्थल थीं । उनकी गोद एक ऐसा आश्रय थी, जहाँ पहुँचनेपर सारे भय, भ्रम और प्रश्न दूर भाग जाते थे ।

ऐसी घटनभरी जिंदगी में राकेश सोलहवाँ साल पार कर रहे थे, कि उनके पिता का स्वर्गवास हो गया । कई महीनों तक का मकान का किराया बाकी था, इसलिए मकान मालिक ने तब तक पिता का मुरदा उठाने नहीं दिया, जब तक मकान का किराया चुकाया नहीं गया । अंत में माँ की चूडियाँ बेचकर किराया चुकाया गया । ऐसी ऋणग्रस्त परिस्थिति में ही सारे परिवार की जिम्मेदारी उनपर आ पडी । ऐसे समय में जीवन का मार्ग उन्हें स्वयं को चुनना था । स्वतंत्र लेखन और प्रांजल आत्माभिव्यक्ति का मार्ग उन्होंने चुना ।

जीवन के सब आघातों को सहते सहते ही राकेश ने अपनी शिक्षा पूरी की । उनकी प्रारंभिक शिक्षा अमृतसर में और उच्च शिक्षा लाहौर में हुई । लाहौर के ओरिएण्टल कॉलेज से संस्कृत में एम.ए. परीक्षा उत्तीर्ण की । परन्तु बढती हुई ज्ञानपिपासा को शांत करने के लिए उन्होंने जालंधर में प्राइवेट अध्ययन करते हुए प्रथम श्रेणी लेकर हिन्दी में एम.ए. किया । इसके बाद उन्होंने सर्व प्रथम बंबई में अध्यापन कार्य शुरू किया, परंतु वहाँ के घुटनभरे वातावरण से छुटकारा पाने के लिए वे शिमला चले गये । १९४९ में राकेश ने बंबई में किसी फिल्म कंपनी में कहानीकार के पदपर काम किया, परंतु स्वतंत्र अस्तित्व की रक्षा के लिए वह काम भी उन्होंने छोड दिया । १९४७ में वे बंबई के एलफिन्स्टन कॉलेज में हिन्दी के अतिरिक्त भाषा शिक्षक के रूप में नियुक्त हुए, परंतु १९४९ में वहाँ भी इस्तीफा दिया । उसके बाद जालंधर में डी.ए.वी. कॉलेज में प्राध्यापक के पदपर नियुक्त हुए । यह काम छः महीनों तक आपने किया । उसके बाद शिमला में मिशनरी स्कूल में १९५७ तक नौकरी की । किन्तु वहाँ भी किसीप्रकार का समझौता न कर सकने के कारण उन्हें यह नौकरी भी छोडनी

पडी । कुछ वर्षों पश्चात् वह पुन: डी.ए.वी.कॉलेज, जालंधर में हिन्दी विभाग के अध्यक्षपद पर नियुक्त हुए । लेकिन शीघ्र ही उन्होंने इस नौकरी से भी त्याग पत्र दे दिया, तथा स्वतंत्र रूप से लेखनद्वारा जीवन निर्वाह का निश्चय किया ।

वे १९६२-६३ में हिन्दी कहानियों की प्रमुख पत्रिका ` सारिका ` के संपादक रहे । दो वर्ष बाद ही वहाँ से भी उन्होंने इस्तीफा दिया और फिर वे आजीवन स्वतंत्र रूप से लिखते रहे । उन्होंने अनेक नौकरियाँ कीं तथा छोडीं, इसलिए उनके दोस्त श्रीकांत वर्मा ने लिखा है -- ` मोहन राकेश का इस्तीफा उनकी जेब में हुआ करता था । जो भी व्यवस्था पसंद नहीं आयी, इस्तीफा देकर चले गये ।[१] ` सन १९७१ से वे फिल्मवित्त निगम के सदस्य थे । सन १९७० से वे ` नेहरू फैलोशिप ` के अधीन ` नाटक में शब्द के महत्व ` पर कार्य कर रहे थे । ३ दिसंबर १९७२ को अचानक उनका हृदयगति रुक जाने से देहावसान हो गया । आप अपने पीछे आश्रिता, अनिता तथा ढाई और पाँच वर्ष के दो बच्चों को छोडकर चले गये ।

राकेश का जीवन आद्योपांत अस्थिर और अनिर्णीत रहा । वे अपने कार्यक्षेत्र में कहीं भी समायोजन नहीं कर सके । कभी कुछ छोडा, तो दूसरा कुछ ग्रहण किया और दूसरा छोडा, तो कुछ अन्य अपना लिया । वस्तुत: पदत्याग और पत्नी त्याग की प्रक्रिया उनके जीवन में समानांतर भाव से चलती रही । ` अपनेघर ` की तलाश के लिए राकेश ने एक के बाद एक कपडे बदलने की तरह पत्नियाँ बदलीं । राकेश ने अपने जीवन में तीन विवाह किये - सुशीला से, पुष्पा से और तीसरा अनिता से । उनका पहला विवाह १९५० में सुशीला से हुआ । यह विवाह उनके मनोनुकूल नहीं था । अत: विवशता के इस बंधन को वे अधिक समय तक बाँध नहीं रख सके । परिणाम विवाह विच्छेद में बदल गया । धीरे धीरे वे लेखन द्वारा प्रसिध्दि पाने लगे और एक दिन अचानक अपने जीवन के लिए

---

१ अणिमा - २३ दिसंबर, १९७२ ।

`पुष्पा` का चुनाव कर बैठे । उनका यह दूसरा चुनाव भी गलत ही था । राकेश का यह दूसरा विवाह हिस्सार में ९ मई १९६० को उनके एक घनिष्ठ मित्र की बहन `पुष्पा` से हुआ । जिंदगी में खुशियाँ भरने के लिए वे दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन करने लगे । परंतु दूसरी पत्नी मानसिक रूप से विक्षिप्त थीं । राकेश के जीवन में फिर वही घुटन, फिर वही एकान्तप्रियता आयी । उनके मन को गहरी चोट पहुँची । उनकी अनेक कहानियों में[१] यह आहत दृष्टिकोण देखने मिलता है । अपने वैवाहिक जीवन की असफलताओं से तंग आकर अब वे `घर` शब्द से भी भयभीत हुए थे । वे आत्मकेन्द्रित हो उठे । इसप्रकार की मानसिक अवस्था में ही `अँधेरे बंद कमरे` उपन्यास की रचना हुई । धीरे धीरे समय अपनी गति से चलता गया, तो अचानक राकेश की जिंदगी में एक नया मोड आया । इन्हीं दिनों में 'सारिका' के संपादक भी बने और `अनिता` से प्रेमसूत्र में भी बँधते गये । इसप्रेम की परिणति २२ जुलाई १९६३ को एक अकेले कमरे में परस्पर माल्यार्पण के साथ विवाह से हो गयी । अब राकेश को अनिता मिली और अनिता को राकेश । दोनों इस विवाह से खुश थे और अच्छा जीवन जीना चाहते थे । अब अनिता को पाकर वे अनुभव कर रहे थे, कि वे `घर` में हैं । वस्तुत: वे अब तक जिस घर की खोज में व्यस्त थे, वह उन्हें मिल गया था, पर लगता है कि उन्हें कोई इससे भी बडा घर मिलता था, तभी तो वे यकायक `अनिता`, `शालीन` और `पुरवा` को छोडकर वहाँ चले गये, जहाँ से लौटना नहीं होता ।

राकेश का व्यक्तित्व

बाह्य व्यक्तित्व --

राकेश हिन्दी साहित्य में एक विलक्षण व्यक्तित्व लेकर आये । उन्होंने साहित्य को एक नयी गति दी, नयी रंगत दी और उसे परिवेश से जोडकर यथार्थ

---

१ मोहन राकेश - एक और जिंदगी - कहानी ।

का अभिव्यंजक बनाया । उनका बाह्य व्यक्तित्व जितना प्रभावी था, उतना ही विचित्र और विलक्षण भी था । वस्तुत: मोहन राकेश एक आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे । उनके पास एक स्वस्थ शरीर था, आकर्षक चेहरा था और उनकी आँखें सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु के भीतर तक पहुँचकर उसकी आंतरिकता को उजागर करने की क्षमता रखती थीं । उनके व्यक्तित्व का प्रभाव सब व्यक्तियों पर पडता था । उनका स्मित जब ठहाकों में बदलता था, तब ऐसा लगता मानों हँसी का भूचाल आ गया हो ।`[१]

इसप्रकार राकेश का बाह्य व्यक्तित्व आकर्षक, मन को बाँधनेवाला और गहरा प्रभाव छोडनेवाला था । वे जिसके भी संपर्क में आते, उसके मनपर अपने व्यक्तित्व की एक छाप छोड जाते थे । उनके बाह्य व्यक्तित्व में गंभीरता, संजीदगी और एक संतुलन था, किन्तु आंतरिक स्तरपर वे उतने ही असंतुलित और अस्थिरचित थे । बाहर से सीधा, सरल और आकर्षक दिखनेवाले राकेश भीतर से उतने सीधे और सरल नहीं थे । उनके बाहरी और आंतरिक व्यक्तित्व के अंतर को उनकी पत्नी अनिता ने इसप्रकार प्रकट किया हैं --` बाहर से राकेश जी जितने सरल और सीधे दीखते थे, उतने वास्तव में नहीं थे । उन्हें अंदर तक ठीक से समझाना एक बडी समस्या थीं । वे बाहर से जितने `इन्फॉर्मल ` थे उससे ही ज्यादा मन से फॉर्मल ।`[२]

आंतरिक व्यक्तित्व --

राकेश अपने आंतरिक व्यक्तित्व में अनेक संगतियों, असंगतियों और विरोधाभासों से युक्त थे । बराबर कहा जाता रहा हैं, कि राकेश को समझाना मुश्किल हैं, उसके अंतर को टटोलना तो और भी कठिन था । कारण उनका व्यवहार, आचरण, कार्यप्रणाली, मित्रोंपर जान निछावर करने का तरीका, गुस्सा

---

१ कृष्णचंदर :` सारिका` - मार्च १९७३ - पृ.६४

२ अनिता राकेश -` चंद सतरे और ` - पृ.८६ ।

करने का ढंग और रहन सहन आदि में एक खास तरह का अंदाज है । वे बाहर से संगठित और व्यवस्थित लगते थे, किन्तु उनके भीतर उतनी ही मात्रा में असंगठन और बिखराव था ।

राकेश जी जिंदगी अपनी तरह से जी गए, किसी भी समय उन्होंने समझौता नहीं किया । अनेक नौकरियाँ छोडीं, तीन विवाह किये । उनको एक तरह की जिंदगी जीना पसंद नहीं था । वे हररोज जिंदगी, नये ढंग से जीना चाहते थे ।

राकेश भावुक मन के व्यक्ति थे । उनके जीवन में उनके दोस्तों को बहुत महत्वपूर्ण स्थान था । वे हमेशा पत्नी अनिता से कहते थे -- ' मेरी जिंदगी में तुम्हारा स्थान तीसरा है । पहले नंबर पर मेरा लेखन है, दूसरे नंबर पर मेरे दोस्त है और तीसरे नंबरपर तुम हो ।'[1] दोस्तों के साथ ही उन्हें जीवन जीने का अच्छा आनंद मिलता था । राकेश एक जिंदादिल व्यक्ति थे । वे हमेशा सिर ऊठाकर तथा आत्मसम्मान से जीते रहे । उनका हृदय संवेदनशील था । बनावट उन्हें पसंद नहीं थीं । अपनी माँ के प्रति उनके हृदय में विशेष लगाव था । वे विद्रोही तथा स्वच्छंद मनोवृत्ति के थे । उनकी यह वृत्ति उनके साहित्य के पात्रों में हमें दिखाई देती है । जीवन में और साहित्य में वे हमेशा नये नये प्रयोग करते थे । अहं और आवेश यह उनमें ठूँसठूँसकर भरा दिखाई देता है । ईमानदारी उनकी और उनके साहित्य की ओर एक विशेषता है । मिथ्या कथनों से उन्हें नफरत थीं ।

स्वभाव व रुचियाँ --

राकेश का स्वभाव स्नेहपूर्ण, आत्मीयतापूर्ण, विनोदी और भावुक था । वे बौध्दिक और संस्कारशील, परदु:खकातर और संवेदनाशील, जीनियस किन्तु दुनियादारी के खिलाफ, विचारों से बुजुर्ग और खानेपीने में अपनी पसंदगी को प्राथमिकता देनेवाले एक साफवृत्ति के आकर्षक व्यक्ति थे ।

---

१ सारिका - मार्च १९७३ - नंदन के साथ बातचीत, - पृ.११ ।

सिगरेट पीना, बहस करना, ताश खेलना, बीयर पीना, बर्फ़ी में घूमना, किसी मामूली जगह खानापीना, गरीबों की जिंदगी को भीतर से देखना, रेल स्टेशन, प्लेटफॉर्म और सुनसान जगहोंपर घूमना, गप्पें लडाना, कहकहे लगाना, सुबह से शामतक काम करना आदि अनेक शौक उन्हें थे। उनका सबसे बडा शौक था नित नये ढंग से जीने की तैयारी करना।

साहित्य सृजन की भूमिका

राकेश की साहित्य सर्जना, चिंतना आकस्मिक नहीं है। पारिवारिक जीवन चिंत्य, रूढिवादी होने के कारण तथा संस्कार रूप में विडंबना तथा अस्त व्यस्त परिवेश के कारण उनका मन स्थिर और संतुलित नही रहा। वे प्रारंभ से कलाकार थे। कलाकार कभी भी खोखली कृत्रिमता को जीवन का अंग नहीं बना सकते। पिता से संस्कार तो मिले, पर परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थीं। दुलार - प्यार उन्हें मिला, पर वे बंधन से छूट नहीं सके। और इसी कारण एक प्रकार की घुटन तथा कुण्ठा दिखाई देती है।

राकेश पहले से स्वच्छंद मनोवृत्ति के रहे। जब उनपर बंधन डाले गये, तब वे शृंखला तोडकर उठ खडे हुए। परिवार पर लदा कर्जा उनके मन में क्षोभ, अस्थिरता तथा उतावलापन उत्पन्न करता। इसप्रकार पारिवारिक संघर्ष, सामाजिक संघर्ष और देश के विभाजन की घटनाओं ने राकेश के मन में क्रांति जगा दी। वे परंपराओंपर नये दृष्टिकोण से विचार करने लगे, व्यवस्था के खोखलेपन को समझाने लगे। यहीं से आप चिंतन करने लगे। संवेदनाशील होने के कारण अपने परिवारवालों के बारे में भी उनमें शिकायतें थीं। यह संवेदनशीलता ही आगे चलकर परिस्थितियों की गंभीरता, स्थितियों की विषमता और देश की राजनैतिक स्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया स्वरूप राकेश को कलाकार बना गयी। पिता के निधनपर सगे संबंधियों से जो निराशा, मिली, उपेक्षा मिली, उसके कारण भी वे टूट गये थे। मन की ऐसी ही शून्यावस्था में व्यक्ति कुछ न कुछ करता है। राकेश भी इसी समय लिखने लगे। इसप्रकार सामाजिक और पारिवारिक परिवेश

की विसंगतियों ने और देशीय उथलपुथल ने राकेश के भीतर कलाकार को जन्म दिया । चिंतन और संवेदन की इसी प्रक्रिया के कारण राकेश लिखने लगे । साथ ही भावप्रवणता, संवेदनशीलता, वस्तु को सूक्ष्म दृष्टि से देखने की ललक से वे रचनाकार बने ।

जब वे १९ साल के थे, तभी से लिखने लगे । पहली कहानी `नन्ही` १९४४ में लिखी गयी । १९४६ में `भिक्षु` नामक कहानी प्रकाशित हुई । प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके साहित्य में दिखाई देता है । जब जिम्मेदारियाँ आ पडी तब वे अपने आपको परिवेश से कटा हुआ अनुभव करते थे । इसीकारण उनकी कहानियों के पात्र अकेलापन महसूस करते हैं, तनाव और चिंता में जीते हैं । उनकी `एक और जिंदगी` उनकी अपनी ही कहानी है । `अँधेरे बंद कमरे` सुशीला के साथ असफल जीवन को लेकर है । `आधे-अधूरे` की रचना का संसार भी उनका अपना है । पारिवारिक तनाव और बिखराव के बीच राकेश जैसा अनुभव करते रहे उसे इस नाटक में एक आकार प्राप्त हुआ है । इसप्रकार उनका लेखन उनके व्यक्तित्व, उनकी परिस्थितियों और तत्कालीन स्थितियों का रेखाचित्र है । उनके सर्जक को उनके साहित्य के सहारे ही जाना जा सकता है ।

राकेश के साहित्य में व्यक्तित्व का प्रक्षेपण --

राकेश की हर यातना-गाथा, पीडा, टूटन इनके साहित्य में सीधे, तो कहीं प्रकारांतर से प्रतिबिंबित हुई है । मध्यवर्गीय जीवन की समूची संगति - असंगतियों, विकृतियों और स्वीकृतियों, टूटन, असफलता को बेलाग भाषा में बाँधनेवाला राकेश अपनी ईमानदारी के कारण अपने सृजन में अपना ही व्यक्तित्व घोलता गया है; अपनी व्यथा, कथा और उससे जुडी समस्याओंको कहता गया है । उनके नाटक के कालिदास, नंद और महेन्द्रनाथ राकेश के प्रतिरूप हैं । सभी घर से जाकर में लौटते हैं । राकेश की तरह वे भी घरों को छोडते हैं या उन्हें छोडने को विवश हैं । राज्याश्रय कालिदास को पसंद नहीं है । राकेश ने भी `साहित्य की समस्याएँ` में इसे स्वीकार किया है । नंद लाख कोशिश करनेपर भी निवृत्ति और प्रवृत्ति के द्वन्द्व को हल नहीं कर पाता है । महेन्द्रनाथ भी पूरा

टूटा हुआ, निराश और थका हारा व्यक्ति है । `अंधेरे बंद कमरे` में भी हरबंस और नीलिमा द्वन्द्व के शिकार हैं ।

राकेश जीवनभर घर और कला के मध्य एक तनाव झेलते रहे । जब जब जीवन को पूरे फॉर्म में पाने का प्रयास किया तब तब वे कला से दूर हुए या भीतर नहीं देख सके । उनके मन में होनेवाले असंतोष के कारण उनकी नौकरियाँ नहीं टिकी । और इसीकारण नौकरी के समय लिख नहीं सके ।

मानवीय दुर्बलताओं से परिचित और पारिवारिक बिखराव व तनाव को झेलते हुए राकेश को न केवल उनके उपन्यासों व नाटकों में देखा जा सकता है, उसे उनकी `एक और जिंदगी` जैसी कहानियों में भी देखा जा सकता है । उनके अनेक गुणों को इस तरह उनके कृतित्व में देखा जा सकता है ।

साहित्यिक परिचय --

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में राकेश ने कहानीकार के रूप में प्रवेश किया, परन्तु उन्होंने निबंध, संस्मरण, आत्मकथा, उपन्यास, एकांकी और नाटक भी लिखे । राकेश जी ने हिन्दी साहित्य को अल्पावधि में ही एक नयी भूमि प्रदान की । उनकी रचनाओं का विवरण इस प्रकार है ----

	नाटक	प्रकाशन और प्रथम प्रकाशन वर्ष
१)	आषाढ का एक दिन	- (राजपाल प्र.१९५८ इ.स.)
२)	लहरों के राजहंस	- (राजकमल प्र.१९६३)
३)	आधे-अधूरे	- (राधाकृष्ण प्र.१९६९)
४)	पैर तले की ज़मीन	- (राजपाल प्र.१९७५)

एकांकी साहित्य एवं अन्य नाट्यप्रयोग --

१) अण्डे के छिलके तथा अन्य एकांकी तथा बीजनाटक -(राधाकृष्ण प्र.१९७३)

२) रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनिनाटक (राधाकृष्ण प्र.१९७४)

	उपन्यास	प्रकाशन व प्रथम प्रकाशन वर्ष
१)	अंधेरे बंद कमरे	(राजकमल, १९६१)
२)	न आनेवाला कल	(राजपाल १९६८)
३)	अंतराल	(राजकमल १९७२)
४)	स्याह और सफेद	प्रकाश्य
५)	काँपता हुआ दरियाँ	-,,-
६)	कई एक अकेले	-,,-

कहानी संग्रह

१)	इन्सान के खण्डहर	(प्रगति प्रकाशन, दिल्ली, १९५०)
२)	जानवर और जानवर	(राजकमल, १९५८)
३)	एक और जिंदगी	(राजपाल १९६१)
४)	नये बादल	(भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, १९५७)
५)	फौलाद का आकाश	(अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, १९६६)
६)	मिले जुले चेहरें	(राधाकृष्ण १९६९)
७)	क्वार्टर	(राजपाल, १९७२)
८)	वारिस	(राजपाल, १९७२)
९)	मेरी प्रिय कहानियाँ	(राजपाल , १९७१)
१०)	एक घटना	(राजपाल, १९७४)
११)	पहचान	(राजपाल १९७२)
१२)	सुहागिनें	(हिन्द पाकेट हाऊस, १९६६)
१३)	संपूर्ण कहानी संग्रह	(राजपाल, १९८४)
१४)	पाँच लंबी कहानियाँ	(राजकमल १९६०)

यात्रावृत्त -

१) आखिरी चट्टान तक (प्रगति प्रकाशन, १९५३)

२) पतझाड का रंगमंच प्रकाश्य

३) ऊँची झील ,,

लेख निबंध --

१) परिवेश (भारतीय ज्ञानपीठ, १९६७)

२) बलकम खुद (राजपाल , १९७४)

३) साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि (राधाकृष्ण , १९७५)

४) डायरी - व्यक्तिगत-मोहन राकेश की डायरी (राजपाल, १९८५)

अनुवाद --

१) मृच्छकटिक - शूद्रक १९६१

२) अभिज्ञान शाकुंतलम् - कालिदास - १९६५

३) एक औरत का चेहरा - The Portrait of a Lady by He-nry - - James.

४) हिरोशिमा के फूल - Flowers of Hiroshima by Edita Morris.

५) उस रात के बाद - The end of the affair by Graham Green.

शोध कार्य --

` नाटक में सही शब्द की खोज ` विषयपर नेहरु फेलोशिप के अंतर्गत आप कार्य कर रहे थे, परंतु पूरा नहीं कर सके । इसके अतिरिक्त उन्होंने ` समय सारथी ` नाम से ढाई हजार वर्षों के प्रमुख व्यक्तियों की जीवनियाँ लिखी हैं ।

अन्य --

बिना हाड-मांस का आदमी - बाल कहानी संग्रह (राधाकृष्ण, १९७४)
एन एन्थॉलॉजी (आधे अधूरे), आईने के सामने, तेरह कहानियाँ एवं एक साक्षात्कार का अंग्रेजी अनुवाद) - (राधाकृष्ण ,१९७४)
रंगमंच और शब्द (लेख)
शब्द और ध्वनि (लेख) ` इनैक्ट अंक २१
कुछ और अस्वीकार - नयी निगाहों के सवाल घासिए पर साहित्यकार की समस्याएँ ।

इसके अतिरिक्त उन्होंने रिपोर्ताज, संस्मरण तथा रेखाचित्र भी लिखे हैं ।

निष्कर्ष ----

मोहन राकेश हिन्दी साहित्य का एक विलक्षण व्यक्तित्व था । उनके व्यक्तित्व में होनेवाली द्विधावस्था के कारण तथा एक साथ दोनों विरोधी गुण होने के कारण लोगों का उनकी तरफ देखने का दृष्टिकोण अलग था ।

उनके जीवन में वे जो चाहते थे वह कभी नहीं हुआ । वे अपना मनपसंद ` घर ` नहीं बना पाये । वे स्वच्छंद प्रकृति के कारण एक जगह नौकरी नहीं कर सके । लेकिन अपने जीवनकाल में उन्होंने हिन्दी को भरपूर साहित्य दिया । उन्होंने न सिर्फ नाटक ही, बल्कि काव्य को छोडकर साहित्य की बाकी सभी विधाओं में लेखन किया । लेकिन नाटक ही के कारण हिन्दी साहित्य में वे चिरप्रसिद्ध हैं ।

बचपन में वे जिस परिस्थिति में रहे थे, उसके कारण उनमें जो घुटन, कुण्ठा थीं, वह उनके साहित्य में देखी जाती हैं । वैसे तो उनके व्यक्तित्व का प्रतिबिंब उनके सारे साहित्यपर दिखाई देता हैं ।